16

पर्यावरण जागरूकता आन्दोलन

(Environmental Movement)

पर्यावरण एक परिचय

ऐसा अनुमान लगाया जाता है कि तीन सौ करोड़ वर्ष पूर्व पृथ्वी पर जीवन का प्रादुर्भाव हुआ था। सच यह भी तो है कि पर्यावरण एक शाश्वत चीज है क्योंकि जहाँ भी जल, वायु, पृथ्वी, आकाश है वहाँ पर्यावरण भी उपस्थिति है। इसी आधार पर आज इस बात की खोज की जा रही है कि अन्य ग्रहों पर भी जीवन पाने की सम्भावना व्यक्त की जा रही है। अनेक ग्रहों पर शोध कार्य हो रहे हैं। वास्तव में, जीव जगत् के विकास में विभिन्न प्रकार की परिस्थितियों, जीवों में परस्पर अन्तः सम्बन्ध और जीव अथवा प्राणी के मध्य पाये जाने वाले तथा पनपने वाले अन्तर सम्बन्धों पर परस्पर निर्भरता से और अन्तः क्रियाओं के द्वारा समाज का विकास हुआ। इसी के साथ जातीय पर्यावरण का भी विकास होता चला है।

पर्यावरण एक जटिल शब्द है। इसकी व्यापकता का क्षेत्र काफी विशाल है। इसलिये इसके अर्थ को शब्दों की सीमा में बांधना एक दुरूह कार्य है। सामान्यतः हम सम्पूर्ण पर्यावरण को दो श्रेणियों में रखते हैं :- 1. सामाजिक पर्यावरण और 2. भौगोलिक पर्यावरण। सामाजिक पर्यावरण वह है जो व्यक्ति द्वारा नियंत्रित होता है। भौगोलिक पर्यावरण वह है जिस पर व्यक्ति नियंत्रण नहीं कर पाता है। इसे प्राकृतिक पर्यावरण की भी संज्ञा दी जाती है। इसे स्पष्ट करते हुए मैकाइवर और पेज लिखते हैं "पृथ्वी का धरातल, उसकी सब प्रकार की प्राकृतिक दशायें, प्राकृतिक उत्पादन के साधन, भूमि, जल, पर्वत, मैदान, खनिज पदार्थ, पौधे, जलवायु और विश्व की वे सभी शक्तियाँ जो पृथ्वी और मानव को प्रभावित करती हैं, भौगोलिक (प्राकृतिक) पर्यावरण के अन्तर्गत आती हैं।"[1] सामान्यतः पर्यावरण उसे कहा जा सकता है जिसमें जीव और प्रकृति निवास करते हैं और जिसमें परस्पर क्रियायें व अन्तः क्रियायें होती रहती हैं।

जैसे जब इस विषय पर मैं लिखने बैठा तो मेरे दिमाग में यह बात बार-बार कौंधती

---

1. मैकाइवर एण्ड पेज, सोसायटी, पृष्ठ ३५.

रही कि क्या कभी पर्यावरण से जुड़ी असंख्य समस्याओं को लेकर आन्दोलन हुए हैं, पर्यावरण से जुड़ी किसी एक समस्या को लेकर देश के विभिन्न अंचलों में धरना दिये गये हैं? लोग अनशन पर बैठे हैं? जलूस निकाला गया है? सड़कों पर नारे लगाये गये हैं आदि। इस आधार पर मैं यह कह सकता हूँ कि समग्र पर्यावरण की समस्याओं को लेकर कोई बड़ा आन्दोलन नहीं किया गया है जो आन्दोलन हुए वे जनजागृति तक ही सीमित रहे। सम्पूर्ण देश के विभिन्न राज्यों में नहीं हुए। इसे पर्यावरण के लघु जीवी आन्दोलन की भी संज्ञा दी जा सकती है। इस प्रकार के लघु जीवी पर्यावरणीय आन्दोलनों की जन जागृति में महत्वपूर्ण भूमिका है। राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय सेमिनारों, गोष्ठियों और सरकारी विभागों में पर्यावरण पर गंभीर चर्चायें हुई हैं। दुर्भाग्य से वे चर्चाओं और बहस तक ही कैद होकर रह गयी। पर्यावरण संबंधी निष्कर्ष सरकारी तंत्र की गर्द में दबकर रह गये हैं। उन्हें जिस शिद्दत के साथ लागू करना चाहिए था, नहीं किया गया। इन पर्यावरण संबंधी जनजागृति आन्दोलनों का प्रभाव इतना तो अवश्य पड़ा है कि सरकार को पर्यावरण संबंधी अनेक कानून, नियम और अधिनियम बनाने पड़े। पर्यावरण विभाग खोले जाने लगे हैं।

पर्यावरण संबंधी समस्याओं को उजागर करने में समाचार पत्रों की भूमिका को नकारा नहीं जा सकता है। इन्होंने बहुत बड़े स्तर पर पर्यावरण को अपने अखबार का हिस्सा बनाया है। प्राकृतिक सम्पदा को संवारने और सुधारने की आवाजें बुलन्दी पर उठी हैं। पर्यावरण का दोहन करने वाले भू-माफियाओं, उद्योगपतियों की पर्यावरण संबंधी स्वार्थी नीयत का पर्दाफाश किया जा रहा है। इस दृष्टि से देश भर में छोटे बड़े संगठनों ने पर्यावरण संबंधी मुद्दों पर विचार करना ही आरम्भ नहीं किया है, बल्कि उन्हें गंभीरता से भी लिया जाने लगा है। यह पर्यावरण संबंधी लोक चेतना तेजी से आगे बढ़ रही है। घरों में गमले जहाँ सज रहे हैं, वहाँ पार्कों में पेड़-पौधे लगाये जा रहे हैं। सड़कों के किनारे पेड़ लग रहे हैं। विभिन्न प्रकार के वायु, जल, ध्वनि, रासायनिक प्रदूषणों को गरम जोशी से अखबार उठा रहे हैं। इन सब चीज़ों को देखकर यह महसूस होने लगा है कि पर्यावरण जागृति आन्दोलन के कदम निरन्तर आगे बढ़ रहे हैं।

सैंकड़ों लोग और संस्थायें पर्यावरण के मामले को अपने-अपने ढंग से अपना रहे हैं, किन्तु उनके अनुभव और दिलचस्पी के क्षेत्र एक दम अलग-अलग हैं। कुछ वनों को काटना बन्द करना चाहते हैं तो कुछ वन लगा रहे हैं। कुछ बड़े बाँधों से जूझ रहे हैं। कुछ जल प्रदूषण से लड़ रहे हैं। उत्तर-प्रदेश के हिमालय के पर्वतीय इलाके में 'चिपको आन्दोलन' चल रहा है। उधर कर्नाटक के पश्चिमी घाट में 'अप्पिकों आन्दोलन' खड़ा हो गया। सैरंधी घाटी और बड़ेथी बांध जैसी योजनायें जनविरोध के कारण ही रोक दी गई। मध्य-प्रदेश, आन्ध्र प्रदेश तथा महाराष्ट्र की सीमा के पास बनने वाले प्रस्तावित भोपालपट्नम और ईचमपल्ली बाँधों का विरोध करने वाले आन्दोलनों की अगुवाई प्रसिद्ध समाज सेवी बाबा आमटे कर रहे हैं। केरल शास्त्र साहित्य परिषद् ने केरल में चेलियार नदी को बिरला की रेयान मिल से बचाने के खिलाफ़ भारी लड़ाई लड़ी है। ....शाह डोल के

Scanned with CamScanner

लोग जिले में कागज के दलदल में बदलने के खिलाफ किसानों को संगठित करने के काम में मिट्टी बचाओ अभियान में जुटा हुआ है।[2]

आधुनिक भौतिकवादी संस्कृति और सभ्यता के विकास ने देश की सम्पदा में वृद्धि की है। औद्योगीकरण, नगरीकरण, यंत्रीकरण की प्रगति के साथ-साथ विशालकाय, मिल, फैक्टरी, कारखाने भी स्थापित हुए। कृषि में विज्ञान का प्रवेश हुआ, वैज्ञानिक ढंग से खेती करने के कार्य में वृद्धि हुई। इन सब ने मिलकर प्राकृतिक पर्यावरण को नष्ट-भ्रष्ट कर दिया। प्राकृतिक सन्तुलन जो बना और गठा था, वह टूटने लगा, क्योंकि प्रदूषण एक अनिच्छित परिवर्तन है जो भौतिक, रासायनिक क्रियाओं से वायु, मिट्टी और जल से उत्पन्न होकर मानव जीवन के लिये घातक बनता है। इस पर्यावर्णीय प्रदूषण से मानव-जीवन कष्ट-प्रद बन जाता है। **राजेश्वरी प्रसाद चन्दोला** इसी संबंध में लिखते हैं ''आज के भौतिकवाद के युग में हम एक प्रकार के आर्थिक विकास के इन्द्रजाल में फंसे हुए हैं। इसने हमारे पर्यावरण को काफी प्रभावित किया है। पिछले कुछ वर्षों से पूंजीवादी राष्ट्रों द्वारा भारत सहित सभी तीसरी दुनियाँ के राष्ट्रों पर अपनी अर्थव्यवस्था को खुला रखने के लिए दबाव डाला जा रहा है। कहा जा रहा है कि अर्थ-व्यवस्था को खुला करने से इन राष्ट्रों में विदेशी पूंजी का विनियोग होगा।..... पूंजीवादी राष्ट्रों की विदेशी पूंजी का विनियोग होगा।.... पूंजीवादी राष्ट्रों द्वारा अपने इस तर्क की पुष्टि के लिए कोरिया, ताइवान, मलेशिया, सिंगापुर आदि पूर्व एशियाई देशों का उदाहरण दिया जाता है।[3]'' यह पूंजीवादी देशों की बहुत गहरी चाल है कि देश को आर्थिक फलक पर, आज की दुनिया में, उन्नति करना आवश्यक है। यह उदारीकरण, वैश्वीकरण, बाजारवाद और उपभोक्तावाद नव उपनिवेशवादी पूंजीवादी देश के गर्भ से निकला है। पश्चिम के देश अविकसित और विकासशील देशों को ऋण देकर उद्योग की प्रतिस्पर्धा में उतार रहे हैं। चन्द पूंजीपतियों के व्यापार में वृद्धि हुई पर उससे कई गुना ज्यादा प्राकृतिक पर्यावरण को हानि उठानी पड़ रही है। प्रदूषण जीने योग्य समाज का निर्माण नहीं कर रहा है। पश्चिम देशों का पेट कितना बड़ा है, इसकी व्याख्या इस प्रकार की गयी है -

''पश्चिम के भोजन की जरूरतें पूरी करने के कारण बाकी दुनिया में तबाही मची है। अगर इस बारे में आंकड़े जुटाये जायं तो यह साफ हो जायगा कि उपनिवेशवाद खत्म होने के दौर में बाकी दुनियां की जितनी जमीन का उपयोग पश्चिमी देशों के खाने और अन्य जरूरतों को पूरा करने में हो रहा है, वह 1940 में उपनिवेशों के रूप में मौजूद जमीन से कई गुना अधिक है।.... संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम (यूनेप) ने हाल में एक रिपोर्ट जारी की है जिसमें कई देशों पर कर्ज के बोझ और इस कर्जे पर पश्चिमी देशों द्वारा वसूल किया जाने वाले मोटे सूद का जिक्र है। यह सूद पर्यावरण की कीमत के रूप में वसूला जा रहा है। कर्ज के बोझ और विदेश व्यापार की उल्टी सीधी शर्तों के चक्कर में ये देश

---

2. स. अनिल अग्रवाल, हमारा पर्यावरण, पृष्ठ 203.
3. राजेश्वरी प्रसाद चन्दोला, पर्यावरण : आज का भारतीय परिदृश्य, पृष्ठ 38.

Scanned with CamScanner

अपनी प्राकृतिक सम्पदा पर काफी दबाव डालते हैं और उनका जरूरत से ज्यादा दोहन करते हैं।[4]'' यह उद्धरण इस तथ्य का प्रतीक है कि हम पश्चिम की औद्योगिक नीतियों और बाजारवाद के जाल में फंसते जा रहे हैं। हम प्राकृतिक साधनों का दोहन अपने स्वार्थों के अनुसार बड़ी मात्रा में कर रहे हैं। इससे पर्यावरण का सन्तुलन जहाँ असन्तुलित हुआ है वहीं प्रदूषण की समस्या भी गंभीर हो गयी है। यह एक बीमार समाज को गढ़ रही है। मनुष्य, समाज और देश की धन की लिप्सा ने पर्यावरण को अपने हितों और लाभों के लिये प्रयोग करने लगा। **हरिश्चन्द्र व्यास** ने ठीक ही लिखा है कि उन्नीसवीं शताब्दी के पहले तक तो सब कुछ ठीक ठाक चल रहा था क्योंकि तब तक मनुष्य की तीसरी आँख-लालच की आँख खुली नहीं थी। तब तक प्रकृति के सौन्दर्य को ललचाई दृष्टि से उसने नहीं देखा था। आज विनाश की पटकथा जो लिखी जा रही है उसके पीछे लालच की, लूट-खसोट की और लिप्सा की यही दृष्टि उत्तरदायी है।[5]''

वह कहने में अजीब सा लगता है कि जब कभी पश्चिमी देश किसी समस्या पर चिन्ता प्रकट करते हैं। सम्पूर्ण विश्व में अमुक विषय पर चिन्ता प्रकट की जाने लगती है। प्रचारतंत्र अमुक समस्या को तरह-तरह ढंग से प्रचारित करता है। विश्व का ध्यान उस ओर ले जाता है और समस्या किसी विशेष देश की न होकर सम्पूर्ण विश्व की बन जाती है। पर्यावरण, इकोलाजी और प्रदूषण ऐसे ही विषय हैं जो विश्व के लिये समस्या बन चुके हैं। इसे देखते हुए अनेक देशों ने चिन्ता प्रकट करना आरम्भ कर दिया है। इस दृष्टि से विश्व के अनेक देशों में सम्मेलन, संधिया और पर्यावरण की समस्याओं के समाधान हेतु हस्ताक्षर किये गए हैं। अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टि से पर्यावरण के संबंध में **हरिश्चन्द्र व्यास** का विचार है कि, ''जीव वैज्ञानिकों का विचार है कि पारिस्थितिकीय सन्तुलन बनाये रखने के लिये विश्व के अन्य जीवों के साथ अंततः अन्तरिक्ष का भी उपयोग आवश्यक हो सकता है, वैज्ञानिक दृष्टि से विकास, प्रकृति और मानव समाज की अन्तः निर्भरता और विश्व पर्यावरण के सन्दर्भ में इनके महत्व को नकारा नहीं जा सकता। अतएव, अब हमें तकनीकी एवं ज्ञान के तारतम्य को पर्यावरण सन्तुलन की दृष्टि से देखने की आवश्यकता है और सम्पूर्ण जीव जगत् के हित में अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग तथा मानवीय विचारों को अन्तर्राष्ट्रीय संधियों, सम्मेलनों एवं विज्ञान से जोड़ने का सफल प्रयास करने की आवश्यकता है जिससे विश्व में काफी आर्थिक विकास के साथ-साथ विश्व का पर्यावरण सन्तुलन भी कायम रखा जा सके।[6]''

विश्व में संयुक्त राष्ट्र संघ का अपना महत्व है। इसका उद्देश्य है विश्व के मानव जाति का उत्थान और कल्याण करना। संसार के व्यक्तियों में मानव संबंधों की स्थापना करना।

---

4. सम्पादक, अनिल अग्रवाल, हमारा पर्यावरण, पृष्ठ 254-255.
5. हरिश्चन्द्र व्यास, पर्यावरण शिक्षा, पृष्ठ 5.
6. हरिश्चन्द्र व्यास, पर्यावरण शिक्षा, पृष्ठ 264.

Scanned with CamScanner

संयुक्त राष्ट्र संघ पर्यावरणीय समस्याओं को लेकर सदैव चिन्तित रहा है। समस्याओं के समाधान के लिये जहाँ उसने अनेक सुझाव दिये हैं, वहीं इनके निवारण हेतु अनेक कदम भी उठाये हैं। साथ ही अविकसित, तीसरी दुनियाँ और विकासशील देशों को पर्यावरण की समस्या के निराकरण के लिये हर तरह की सहायता भी की है। स्वीडन की राजधानी स्टाकहोम में संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा आयोजित "मानव-पर्यावरण पर एक सम्मेलन" 5 जून से 16 जून 1972 तक किया गया। विश्व पर्यावरण के सन्दर्भ में यह एक महत्वपूर्ण घटना कही जा सकती है। इस सम्मेलन में अनेक महत्वपूर्ण प्रस्ताव पारित हुए। उन प्रस्तावों की भावना निम्नलिखित है-

1. प्राकृतिक और मानव निर्मित पर्यावरण पर सम्पूर्ण मानव जाति का समान रूप से अधिकार होना चाहिए जिससे सभी बौद्धिक, नैतिक, सामाजिक तथा आध्यात्मिक विकास समान रूप से हो सके।

2. मानव पर्यावरण की सुरक्षा और सुधार के हेतु सभी देशों की सरकारें और जन मानस का वांछित कर्त्तव्य होना चाहिए जिससे मानव जाति का कल्याण तथा उचित आर्थिक विकास सम्भव हो सके।

3. हम महसूस कर रहे हैं कि मानव निर्मित पर्यावरण विशेषकर आवासीय और कार्यकारी पर्यावरण (लिविंग एण्ड वर्किंग इनवायरमेन्ट) में अवांछनीय तथा हानिकारक परिवर्तन हो रहे हैं। जल, वायु एवं मिट्टी के प्रदूषण में वृद्धि हो रही है। जीव मण्डल के सन्तुलन में असन्तुलन उत्पन्न हो रहा है। मानव जाति के शारीरिक, मानसिक और सामाजिक स्वास्थ्य पर घातक प्रभाव पड़ रहा है। हमें इन अनुभवों के प्रति सचेत एवं जागरूक होने की आवश्यकता है।

4. विकसित और विकासशील देशों के मध्य व्याप्त दूरी को कम करना चाहिए। विकासशील देशों में पर्यावरण की सुरक्षा तथा सुधार को दृष्टि में रखकर तथा आवश्यकता को आधार मानकर औद्योगीकरण होना चाहिए।

5. बढ़ती हुई जनसंख्या भी पर्यावरण के लिये एक समस्या बन गयी है। इस समस्या का निराकरण करना आवश्यक है। लेकिन सामाजिक प्रगति, उत्पादन में वृद्धि और वैज्ञानिक तथा प्रौद्योगिकी को ध्यान में रखना भी आवश्यक है। अस्तु, उचित मापदण्डों को अपनाया जाना चाहिए।

6. मानव सभ्यता के इतिहास का विश्लेषण करते हुए हमें अपने कार्यों के विषय पर चिन्तन करने की आवश्यकता है। प्रकृति, पर्यावरण और प्राणी के सहयोग के साथ-साथ संयमित और संगठित प्रयत्न से ही विश्व अर्थ व्यवस्था और समाज का विकास सम्भव है। इन्हीं से विश्व-शान्ति भी स्थापित हो सकती है।

1972 से पूर्व भी पर्यावरण से जुड़ी हुई समस्याओं पर विचार होना आरम्भ हो गया था। जैसे सन् 1959 में अन्तर्राष्ट्रीय भू-भौतिकी वर्ष आई.जी.वाई. मनाया गया। इस कार्यक्रम

Scanned with CamScanner

से वैधानिकों ने प्रेरणा प्राप्त की और एक विराट कार्यक्रम बनाने की योजना तैयार की। इस कार्यक्रम को आई.बी.पी. (अन्तर्राष्ट्रीय जैविक कार्यक्रम) के रूप में जाना जाता है। इस कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य था कि मानव कल्याण और उत्पादकता के जैविक आधार को विषय बनाकर उस पर शोध कार्य किया जाय। इस आई.बी.पी. का संबंध संयुक्त राष्ट्र के अनेक संगठनों से अन्ततः हो गया। इस कार्यक्रम के तहत पर्यावरण की विभिन्न समस्याओं का समाधान करना है।

1975 में पर्यावरण और समुद्र निधि पर संयुक्त राष्ट्र संघ का तृतीय सम्मेलन हुआ। 1982 में स्टॉकहोम में 19वीं जयन्ती के अवसर पर नेरोबी में सम्पन्न हुए सम्मेलन में एक घोषणा पत्र स्वीकार किया गया जिसमें सभी राष्ट्रों से अनुरोध किया गया:[7]

1. मरुस्थल के प्रकार और वनों के काटे जाने पर नियंत्रण सहित, भूमि एवं जल प्रबन्ध का संवर्द्धन किया जाना चाहिए।
2. प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण पर ध्यान दिया जाना चाहिए।
3. पेयजल और जल-मल निकासी की ओर अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर ध्यान दिया जाना चाहिए।
4. ऊर्जा के नये स्त्रोतों का संवर्द्धन किया जाना चाहिए।
5. क्षेत्रीय महासागर कार्यक्रम का संवर्द्धन किया जाना चाहिए
6. वायु प्रदूषण से पर्यावरण पर पड़ने वाले दुष्प्रभावों को रोकने के प्रयास किये जाने चाहिए।
7. रासायनिक सुरक्षा को बढ़ा दिया जाना चाहिए और हानिकारक रसायनों पर नियत्रंण स्थापित किया जाना चाहिए।

पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम 23 मई, 1986
(Environmental Conserving Act 23 May, 1986)

संयुक्त राष्ट्र के मानवीय पर्यावरण सम्मेलन, जो 16 जून, 1972 में स्टाकहोम में हुआ था, में यह निर्णय लिया गया था कि मानवीय पर्यावरण के संरक्षण और सुधार के लिये उचित कदम उठाये जायें। भारत गणराज्य के 37वें संसद द्वारा अग्रलिखित रूप में वह अधिनियम हो। इसके मुख्य बिन्दुओं की व्याख्या इस प्रकार की जा सकती है-

इस अधिनियम का विस्तार सम्पूर्ण भारत में किया गया। अधिनियम को अलग-अलग क्षेत्रों और भिन्न-भिन्न तिथियों में लागू करने का प्रावधान है। पर्यावरण के अन्तर्गत जलवायु और भूमि और इनके अन्तः संबंध इनमें व्याप्त हैं। वे पर्यावरणीय चीजें जैसे द्रव्य, गैसीय

---

7. हरिश्चन्द्र व्यास, पर्यावरण शिक्षा, पृष्ठ 267.

Scanned with CamScanner